

गुप्त- कालीन सिक्कों में प्रयुक्त धातुओं के स्रोत का अध्ययन

Anita Kumari^{1*}, Dr. Vinod Kumar Yadavendu²

¹ Research Scholar, Magadh University, Bodhgaya

² Associate Professor, PG Department of Ancient Indian & Asian Studies, Magadh University, Bodhgaya

सार - प्राचीन-भारत में सिक्कों के निर्माण में सुवर्ण, रजत, ताम्र, कांसे, सीसा, पोटीन आदि धातुओं का प्रयोग किया गया। सिक्के प्राचीन-भारत के आर्थिक इतिहास के अनेक पहलुओं पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं। यह सुविदित है कि प्राचीन-भारत में सिक्कों के निर्माण में सुवर्ण, रजत, ताम्र, कांसे, सीसा, पोटीन आदि धातुओं का प्रयोग किया गया। इससे यह निर्धारित होता है कि विभिन्न क्षेत्रों में सिक्कों के निर्माण में विशेष धातुओं का उनकी प्राप्ति के अनुसार प्रयोग में लाया गया था। लगभग सभी देशों में धातुओं के चुनाव की सीमा थी, क्योंकि उनके असमान तथा भौगोलिक वितरण एवं इसकी सीमा अन्तर्राज्यीय वाणिज्य एवं व्यापार के विकास तक जारी रही। गुप्त- नरेशों ने सोने, चाँदी तथा ताँबे धातु का चुनाव कर सिक्के जारी किये कुषाण युग में सर्वप्रथम भारत में सोने के सिक्कों का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। गुप्त- नरेशों ने सोने के धातु का सिक्कों में प्रयोग जारी रखा।

कुंजी शब्द - गुप्त- कालीन, प्रयुक्त, धातुओं, सिक्कों

-----X-----

परिचय

भारत में प्राचीन काल से ही सुशिक्षित, सुगठित एवं युद्ध कला में निपुण सेना रही है। अस्त्र-शस्त्र के प्रयोग में कुशल, युद्ध सिद्धान्तों के ज्ञाता एवं युद्ध कला में अभ्यस्त सैनिकों के समूह को सेना कहते हैं। प्राचीन ग्रन्थों में सेना को दण्ड अथवा बल कहा गया है। यह राज्य के सप्तांगों में से एक महत्वपूर्ण अंग माना गया है। प्राचीन-भारतीय-ग्रन्थों में चतुरंगिणी सेना का प्रारम्भ एवं विकसित रूप देखने को मिलता है।

महाभारत में चतुरंगिणी, पदाति, अश्व, हाथी एवं रथ, हाथी एवं रथ, सेना का उल्लेख हुआ है। जैन एवं बौद्ध 4 ग्रन्थों में पदाति, रथ, हस्ति और अश्व आदि चतुरंगिणी सेना का विस्तृत उल्लेख मिलता है। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि छठीं शताब्दी ईसा पूर्व से चतुरंगिणी सेना में काफी विकास हो गया था। अभिलेखों में भी चतुरंगिणी सेना के उल्लेख मिलते हैं। शिल्पकला में भी चतुरंगिणी सेना का अंकन प्राप्त होता है, उदाहरण के लिए साँची स्तूप में अनेक स्थलों पर इसके चारों अंगों का अंकन हुआ है गुप्त-कालीन सिक्कों पर भी अंकित दृश्यों से सैन्य-संगठन पर महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है। गुप्त - सिक्कों से हमें पैदल, अश्वारोही तथा गजारोही सैनिकों के अंकन मिले हैं। सिक्कों पर रथारोही का अंकन नहीं मिलता है।

गुप्त- कालीन सिक्कों शस्त्रास्त्र एवं वेशभूषा

पदाति सेना

विश्व के अन्य भागों की भाँति प्राचीन भारत में भी पैदल सैनिकों को सेना का प्रमुख अंग माना जाता था। वैदिक काल से ही पैदल सेना की जानकारी मिलती है। इस काल में इसे पति, पतीनांपति से सम्बोधित किया गया है। साहित्यिक तथा अभिलेखीय साक्ष्यों से पदाति सेना के विकासक्रम को देखा जा सकता है

(अ) शस्त्रास्त्र एवं वेशभूषा

गुप्त- सिक्कों के पुरोभाग के कुछ अंकनों से पदाति सैनिकों के विषय में कुछ धारणायें प्राप्त होती हैं। समुद्रगुप्त के दण्डधारी प्रकार पर राजा चिपकी टोपी, कोट तथा पतलून पहने हैं। इसके बाँये हाथ में दण्ड है और दाहिने हाथ से वेदिका पर आहुति डाल रहा है। इसकी वेश-भूषा और दृश्य निश्चय ही एक सैनिक की है। इन सिक्कों पर कभी- कभी रत्न जड़ित टोपी तथा कोट धारण किये हैं, जिसके सिरे नुकीले हैं और कुहनी पर कोट की आस्तीन मुड़ी हुई है तथा विभिन्न मोड़ों वाला कमरबन्द पहने हैं। चूड़ीदार पतलून धारण किये हैं तथा बटनयुक्त जूते धारण किये हैं। सिक्कों पर वर्तुलाकार लेख 'समरशतवितत विजयोजितरिपुरजितो दिवं जयति इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण है अर्थात् सर्वत्र विजयी राजा, जिसने सैकड़ों युद्ध में सफलता प्राप्त की और शत्रु को पराजित किया, स्वर्ग श्री प्राप्त करता है

। प्रयाग प्रशस्ति में भी उसे युद्धों का विजेता बताया गया है, अतः वेश-भूषा और लेख के आलोक में. समुद्रगुप्त एक कुशल सैनिक प्रदर्शित किया गया है ।

समुद्रगुप्त के परशुधारी प्रकार के सिक्के भी पदाति सैनिक पर रोचक प्रकाश डालते हैं । इनके पुरोभाग पर राजा दण्डधारी प्रकार का कोट (वारबाण) पहिने हैं, जिसके कोने लटकते हुए चित्रित हैं और कोट का आस्तीन ऊपर लपेटा हुआ, सिर के पीछे पट्टबन्ध बगल में तलवार लटक रही है, दाहिना हाथ कटि पर है, बाँये हाथ में परशु, राजा के बाँयी या दाँयी ओर वामन पुरुष, सामने खड़ा तथा राजा को देख रहा है । कुछ सिक्कों पर वामन असली सैनिक वेश में अंकित है । पुरोभाग के दृश्य से पता चलता है कि राजा युद्ध का निरीक्षण कर रहा है ।

अश्व सेना

अश्व का प्रशिक्षण अथवा युद्ध-प्रयोजन हेतु प्रयोग मानव - इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है । अब यह निश्चित रूप से स्वीकार किया जाता है कि शक आक्रमणकारियों के साथ सम्बन्धों के कारण भारतीयों ने इस कला को विदेशियों से ग्रहण किया, जो कि स्थायी अश्व सेना रखते थे । महाभारत में धनुषधारी अश्वारोही सैनिकों के कुछ उल्लेख मिलते हैं । महाकाव्य - काल में चतुरंगिणी सेना का एक महत्वपूर्ण अंग अश्वारोही सेना था ।

महाभारत में अश्वारोही सेना, युद्ध में लड़ती हुई सेना के अभिन्न अंग के रूप में वर्णित है अतः इस ग्रन्थ में वर्णित अश्वारोही सेना के आधार पर कहा जा सकता है कि भारतीय इतिहास में सीथियन - युग के पहले ही भारतवासियों को अश्वारोही का ज्ञान था, परन्तु पी. के. गोडे का मत है कि महाभारत में वर्णित धनुषधारी अश्वारोही सैनिक के उल्लेख भारत में कुषाण काल में जोड़े गये अथवा व्यापक रूप से ई. पू. 50 तथा 300 ई. के मध्य दाहिने हाथ से गुप्त- नरेश सिंह कुमारगुप्त प्रथम नरेश चुस्त कूर्पासक, धोती तथा पगड़ी पहने दाहिने हाथ से धनुष की प्रत्यञ्चा कान तक खींचते हुए निशाना लगा रहा है तथा झपटते हुए व्याघ्र को कुचलते हुए अंकित है । व्याघ्र पीछे गिर रहा है । चन्द्रगुप्त द्वितीय, सिंह - निहन्ता प्रकार के सिक्कों के पुरोभाग पर आधी आस्तीन का कोट, पायजामा अथवा जाँघिया तथा टोपी अथवा ललाट पर कलंगी बाँधे अथवा मोती की लड़ी से युक्त पगड़ी पहने अंकित है ।

धनुष बाँये या दाहिने हाथ में तथा दूसरे हाथ से प्रत्यञ्चा चढ़ाकर सिंह पर निशाना लगा रहा है, जो सब योद्धा नहीं कर सकते हैं । सम्भवतः राजा को सव्य साची प्रदर्शित करने की कलाकार की इच्छा थी । राजा को सिंह से डटे हुए लड़ते दिखाया गया है अथवा

सिंह को कुचलते हुए दिखाया गया है अथवा सिंह लौटते हुए अंकित है । कुछ सिक्कों पर राजा तलवार से सिंह पर आक्रमण कर रहा है । कुमारगुप्त प्रथम के सिंहनिहन्ता प्रकार के सिक्कों पर भी गुप्त नरेश आधी बाँह वाला कोट, जाँघिया, कमरबन्द पहने तथा सिर पर पट्टबन्ध बाँधे अंकित है । बाँये हाथ में धनुष पकड़े, प्रत्यञ्चा कान तक खींचते हुए बाण द्वारा सिंह पर निशाना लगा रहा है । से डटकर युद्ध करते हुए अथवा सिंह को लात से कुचलते हुए अंकित है के व्याघ्रनिहन्ता प्रकार के सिक्कों के पुरोभाग पर राजा पगड़ी, आधी बाँह वाला कोट तथा धोती धारण किये है ।

गज-सेना

प्राचीन भारतीय युद्ध में गज की भी महत्वपूर्ण भूमिका थी । प्रायः सैनिक टुकड़ी के नायक या सेनापति तथा राजा - युद्ध भूमि में हाथी पर सवार होकर सेना का प्रतिनिधित्व करते थे । महाकाव्य-काल में हस्ति - सेना का अधिक विकसित रूप देखने को मिलता है । रामायण की अपेक्षा महाभारत में इस सेना के अधिक उल्लेख आये हैं । इस काल में राजा हाथियों के कसे हुए हौदे के भीतर बैठते थे । युद्ध भूमि में हाथियों के लिए चार-सैनिक रथों में बैठकर चलते थे । वैदिक काल की सेना में सेना के प्रयोग का कोई उल्लेख नहीं मिलता है । पैरों की सुरक्षा के युद्ध भूमि में गज- - परन्तु महाकाव्य-काल में गज-सेना का अधिक विकास हो गया । कालान्तर में हस्ति - सेना का महत्व पूर्व की अपेक्षा बढ़ गया था । कटियस ने भारतीय सेना में हस्ति-सेना का उल्लेख किया है । उसने अग्रमीज की भयानक मज - सेना का उल्लेख किया है मौर्य काल में गज- सेना में अधिक विकास हो गया था । विदेशी लेखकों का कथन है कि चन्द्रगुप्त मौर्य की प्रशिक्षित गज-सेना से प्रभावित होकर सेल्यूकस ने हेरात, कन्धार तथा काबुल के बदले में 500 हाथियों को उपहार में प्राप्त किया था । युद्ध-भूमि में हाथियों की उपयोगिता देखकर पश्चिमी देशों में लड़े जाने वाले युद्धों के लिए उनकी माँग होने लगी ।

रोम के विरुद्ध द्वितीय प्यूनिक युद्ध में हैनिबाल तथा हैसड्रबल में भारतीय हाथियों का प्रयोग किया और राफिया के युद्ध में तोलेमी के लीबियाई हाथी एन्टीमेकस के भारतीय हाथी के सम्मुख थोड़े समय भी न टिक सके मौर्य काल के उपरान्त, सम्भवतः, गज-सेना के विकास में कमी आ गयी ऐसा प्रतीत होता है कि विदेशियों की अश्व शक्ति ने भारतीयों को प्रभावित किया और पोरस- सिकन्दर - युद्ध के अनुभव ने, जिसमें हाथियों ने बिगड़कर पीछे भागने और अपनी ही सेना को हानि पहुँचाने का उदाहरण प्रस्तुत किया था, भारतीय शासकों को गज-सेना के स्थान पर अश्व- सेना में वृद्धि करने पर बाध्य किया, फिर भी हाथियों को सेना के अंगों से हटाया न

जा सका बी. पी. सिनहा के अनुसार, बैक्ट्रियाई, ग्रीक- सेना में हस्ति उपयोग की पुष्टि उनके सिक्कों से होती है।

किन्तु हिन्दू- ग्रीक, शक- सिक्कों पर हस्ति सवार हौंदे आदि का अंकन नहीं मिलता है, अतः हाथी युद्ध में प्रयुक्त होने वाला हाथी था या जंगली पशु मात्र। यह भी सम्भव है कि हाथी का एक धार्मिक प्रतीक के रूप में अंकन हुआ हो। गजारोही प्रकार का प्रथम अंकन कुषाण वंशीय सिक्कों पर मिलता है गुप्त - नरेश कुमारगुप्त प्रथम के गजारोही प्रकार के सुवर्ण सिक्कों के पुरोभाग पर राजा पूर्ण सुसज्जित हाथी पर सवार है जो तेजी से बाँयी ओर जा रहा है। राजा के दाहिने हाथ में अंकुश है। इसी नरेश के गजारूढ़ सिंहनिहन्ता प्रकार के सिक्कों के पुरोभाग पर सजे हुए हाथी पर सवार राजा हाथ उठाये हुए है और आक्रमण करने के लिए कंटार लिये है। इस प्रकार कुषाण एवं गुप्त राजाओं के इन सिक्कों से ऐसा प्रतीत होता है कि राजा स्वयं हस्ति संचालन में निपुण होता था। स्पष्ट रूप से यह कहना कठिन है कि इन सिक्कों पर अंकित प्राचीन भारतीय शिल्प-कला में भी गजारोहियों के अनेक रूपों के अंकन मिलते।

अध्ययन का उद्देश्य

1. गुप्त- कालीन सिक्कों शस्त्रास्त्र एवं वेशभूषा का अध्ययन
2. सिक्कों में प्रयुक्त धातुओं के स्रोत का अध्ययन

अनुसन्धान क्रियाविधि

इन विधियों के माध्यम से एकत्र किए गए डेटा और अध्ययन के उद्देश्यों के विश्लेषण किया जा सकता है। सिक्के प्राचीन-भारत के आर्थिक इतिहास के अनेक पहलुओं पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं। यह सुविदित है कि प्राचीन-भारत में सिक्कों के निर्माण में सुवर्ण, रजत, ताम्र, कांसे, सीसा, पोटीन आदि धातुओं का प्रयोग किया गया। इससे यह निर्धारित होता है कि विभिन्न क्षेत्रों में सिक्कों के निर्माण में विशेष धातुओं का उनकी प्राप्ति के अनुसार प्रयोग में लाया गया था। लगभग सभी देशों में धातुओं के चुनाव की सीमा थी, क्योंकि उनके असमान तथा भौगोलिक वितरण एवं इसकी सीमा अन्तर्राज्यीय वाणिज्य एवं व्यापार के विकास तक जारी रही। गुप्त- नरेशों ने सोने, चाँदी तथा ताँबे धातु का चुनाव कर सिक्के जारी किये कुषाण युग में सर्वप्रथम भारत में सोने के सिक्कों का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। गुप्त- नरेशों ने सोने के धातु का सिक्कों में प्रयोग जारी रखा।

डाटा विश्लेषण

आर्थिक जीवन

सिक्के प्राचीन-भारत के आर्थिक इतिहास के अनेक पहलुओं पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं। यह सुविदित है कि प्राचीन-भारत में सिक्कों के निर्माण में सुवर्ण, रजत, ताम्र, कांसे, सीसा, पोटीन आदि धातुओं का प्रयोग किया गया। इससे यह निर्धारित होता है कि विभिन्न क्षेत्रों में सिक्कों के निर्माण में विशेष धातुओं का उनकी प्राप्ति के अनुसार प्रयोग में लाया गया था। लगभग सभी देशों में धातुओं के चुनाव की सीमा थी, क्योंकि उनके असमान तथा भौगोलिक वितरण एवं इसकी सीमा अन्तर्राज्यीय वाणिज्य एवं व्यापार के विकास तक जारी रही। गुप्त- नरेशों ने सोने, चाँदी तथा ताँबे धातु का चुनाव कर सिक्के जारी किये कुषाण युग में सर्वप्रथम भारत में सोने के सिक्कों का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। गुप्त- नरेशों ने सोने के धातु का सिक्कों में प्रयोग जारी रखा।

सामान्यतः यह विश्वास किया जाता है कि भारत में रजत की बहुलता में आपूर्ति कभी नहीं हो पायी, इसलिए इस धातु की भारतीय आपूर्ति को विदेशी आयात से पूरा किया गया। द पेरीप्लस आफ द एरिथ्रियन सी में बैरबैरिकम् बन्दरगाह का उल्लेख हुआ है, जहाँ रजत तथा सुवर्ण पत्रों (प्लेट्स) का आयात होता था। चाँदी की अपेक्षा ताँबे का आक्सीकरण अधिक होता है, जिसके कारण सम्भव है कि गुप्त-कालीन ताँबे के सिक्के कम मात्रा में मिलते हैं। एक यह भी सुझाव रखा गया है कि प्रारम्भिक युगों में 8 जिसका आधुनिक भारत की अपेक्षा ताँबे की क्रय शक्ति अधिक थी। मुद्राशास्त्रियों द्वारा ऐसा विश्वास किया जाता है कि भारतीय सिक्के मूलतः स्थानीय विशेषता को प्रदर्शित करते हैं, स्पष्टीकरण सिक्कों के विभिन्न प्रकारों द्वारा होता है। गुप्तों ने पश्चिमी क्षत्रपों को पराजित कर पश्चिमी - भारत पर अधिकार कर लिया था और सर्वप्रथम पराजित शासकों के रजत सिक्कों की शैली, माप आदि का अनुकरण कर नवीन विजित भू-भागों में अपने चाँदी के सिक्के जारी किये थे। यह सुझाव समीचीन प्रतीत होता है कि विभिन्न धातुओं के लिए विभिन्न क्षेत्रों के प्रति झुकाव अथवा लगाव ठोस आर्थिक कारणों पर आधारित होना चाहिए, उदाहरणार्थ विद्वानों का कहना है कि चन्द्रगुप्त द्वितीय ने अपने शासन-काल में सर्वप्रथम चाँदी के सिक्के पश्चिमी भारत में शक क्षत्रपों को पराजित कर चतुर्थ शताब्दी के अन्त में जारी किये थे।

सिक्कों में प्रयुक्त धातुओं के स्रोत

धातुओं के स्रोत का ज्ञान महत्वपूर्ण आर्थिक स्थिति पर प्रकाश डालता है। गुप्त- नरेशों ने सोने, चाँदी तथा ताँबे या काँसे के सिक्के जारी किये थे, अतः सिक्कों में प्रयुक्त धातु देशज थी अथवा बाहर से आयात की गयी थी, यह एक रोचक तथ्य है। सुझाव दिया गया है कि गुप्त- नरेशों ने सिक्कों के निर्माण के

लिए सोना रोम साम्राज्य के पूर्वी क्षेत्र, चीन, दक्षिणी-पूर्वी एशिया के व्यापार के माध्यम से तथा परन्तु साहित्य से भारत में सोने की खानों का उल्लेख प्राप्त होता है। स्ट्रैबो ने पश्चिमोत्तर- भारत में सोने की खानों का उल्लेख किया है को बताया है।

अमरकोश तथा कालिदास दक्षिणी - भारत से प्राप्त किया था, पेरीप्लस ने भी गांगेय - क्षेत्र में सुवर्ण खानों ने भी सोने की खानों का वर्णन किया है। उत्तर-भारत में धातु-अयस्कों का मुख्य क्षेत्र छोटा नागपुर का भू-क्षेत्र है और इस क्षेत्र से सुवर्ण, ताम्र, लौह तथा अभ्रक प्राप्त होता है। किन्तु महत्वपूर्ण सुवर्ण स्रोत मयूरभञ्ज सीमा के निकट परगना के दक्षिणी-पश्चिमी भू-भाग था। यहाँ अनेक पीसने अथवा चूर्ण बनाने वाले पत्थर अथवा उपकरण कुण्डकोछा के गाँव के दक्षिणी जंगल से मिले हैं तथा प्राचीन खानों से फीट गहराई में दण्ड मिला है। एक प्रस्तर हथौड़ा तथा प्राचीन कारीगरों के लिए अनेक भट्टियों के अवशेष की टूटी छेनी मुख्य उपलब्धि है मिले हैं।

इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की धातुओं को पिघलाने हैं। छोटा नागपुर की खानों की खुदाई से प्राप्त प्रमाण कम-से-कम परवर्ती कुषाण युग (तीसरी सदी ई.) से अवश्य ही मिलते हैं। इसकी सिक्कों से होती है, जो वहाँ शव भस्म - पात्र में। प्राप्त साक्ष्यों से विदित होता है कि सम्भवतः पंक्ति में ढाले गये प्रतीत होते हैं। इसी प्रकार पुष्टि रेखा खानों में उन कुषाण प्रकार के अस्थियों के टुकड़ों के साथ पाये गये हैं ये सिक्के अप्रयुक्त थे तथा एक साँचे में एक के सिक्के गंजाम, पुरी - बालासोर, छाड़बस्स तथा मयूरभञ्ज क्षेत्र में पाये गये हैं कुषाण- नरेश, वासुदेव की मृत्यु के साथ लगभग 2 ईस्वी में कुषाण - साम्राज्य का विघटन प्रारम्भ हुआ और यदि किसी भी प्रकार का कुषाण प्रभाव पूर्वी भारत पर रहा भी होगा तो तृतीय शताब्दी के मध्य समाप्त हो गया था।

ये वास्तविक कुषाण सिक्के नहीं हैं, कुषाण सिक्कों के भददे अनुकरण हैं। तो गुप्त युग के पहले दफनाया गया था - ऐसा सम्भव प्रतीत होता है कि अपितु विनियम हेतु अस्थि - भस्म - पात्र या अथवा गुप्त युग के प्रारम्भिक चरणों में। इन खानों की खुदाई सम्भवतः चन्द्रगुप्त प्रथम अथवा उसके पुत्र समुद्रगुप्त के समय की गयी होगी पुनः रामगढ़ के निकट तृतीय शताब्दी से पाँचवीं शताब्दी तक के सिक्के प्राप्त हुए हैं, जो इस आशय की पुष्टि करते हैं अतः उपर्युक्त साक्ष्यों के आलोक में ऐसा तर्कसंगत लगता है कि परवर्ती कुषाण- युग के पश्चात् गुप्त- युग में इन खानों का खूब प्रयोग किया गया होगा। इसकी पुष्टि अमरकोश से होती है, जो निर्मित तथा अनिर्मित सुवर्ष तथा खनित एवं अखनित खानों का उल्लेख करता है।

भार-प्रणाली

मुद्रा का एक प्रमुख कार्य दैनिक - जीवन में बाजार में लेन-देन हेतु कीमत का मापदण्ड स्थापित करना था। इसके बदले में भार की नियमित माप-तौल पर कीमतों की माप निर्भर करती है। यह प्रत्येक मुद्रा - प्रणाली के लिए आवश्यक है। गुप्त सिक्के इस आवश्यकता की पूर्ति करते हैं।

सुवर्ण सिक्के

प्रारम्भिक गुप्त-शासकों के सिक्के तौल में परवर्ती, कुषाण सिक्कों से प्रभावित थे समुद्रगुप्त के सिक्के तृतीय शताब्दी के परवर्ती कुषाण सिक्कों के तौल के समान हैं। ये सिक्के सामान्यतः ग्रेन से लेकर ग्रेन तक भार के हैं। वास्तव में एक प्रकार के सिक्के के विभिन्न प्रकारों में तौल में एकता नहीं है। इसी नरेश के अश्वमेध प्रकार के सिक्के, जो त्रिकुल घिसे नहीं हैं, तौल में कभी 2 ग्रेन, कभी 9 ग्रेन तो कभी ग्रेन होते हैं। चन्द्रगुप्त द्वितीय के धनुर्धारी प्रकार के कुछ सिक्के 27 ग्रेन 24 ग्रेन और कुछ ग्रेन के हैं। तौल का क्रम कालान्तर में बढ़ता ही गया। आधुनिक युग में यह विशेषता देखने को नहीं मिलती है। उपर्युक्त तौल - मान में भिन्नता का कारण सम्भवतः यह हो सकता है कि वर्तमान ढंग के वैज्ञानिक तौल-मान के अभाव में यह आसान न था कि एक ही तौल के समान सिक्के तैयार किये जायें। अतः एक या दो ग्रेन की कमी नगण्य समझी जा सकती है। अल्टेकर महोदय का यह सुझाव तर्कसंगत लगता है कि सिक्कों की तौल में भिन्नता हेतु गुप्तों को केवल आरोपित नहीं किया जा सकता है। प्राचीन भारत में यह एक सामान्य प्रथा थी।

रजत-सिक्के

गुप्त-युग के रजत- सिक्कों का नियमित प्रचलन चन्द्रगुप्त द्वितीय के शासन- काल में प्रारम्भ हुआ। उसने पश्चिमी - भारत में शक - सत्ता का विनाश कर वहाँ के लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु रजत - सिक्के जारी किये होंगे, क्योंकि गुजरात, काठियावाड़ तथा मालवा क्षेत्र के निवासी शकों के रजत - सिक्कों का प्रयोग एक लम्बे समय से करते आ रहे थे, अतः दैनिक - जीवन में लेन-देन में इसी धातु के सिक्कों से परिचित रहे होंगे। अल्टेकर महोदय का विचार है कि गुप्त सम्राटों ने चाँदी के सिक्कों को क्षत्रप सिक्कों के स्थान पर चलाया और स्वभावतः इनमें 30 ग्रेन तौल मान को अपनाया गया। परन्तु गुप्त-रजत- सिक्के परवर्ती क्षत्रप शासकों के भार-मान का अनुसरण करते हुए 27-34 ग्रेन भार में बदलते रहे। इस सम्बन्ध में एक अन्य यह सुझाव भी रोचक है कि चन्द्रगुप्त द्वितीय तथा उसके उत्तराधिकारियों ने न केवल पश्चिमी भारत में अपितु मध्य - भारत में रती वाले भार - मान के रजत-सिक्के जारी किये थे। चूँकि पश्चिमी क्षत्रपों ने अर्द्ध

द्रम प्रकार के रजत - सिक्के जारी किये थे, अतः सिद्धान्ततः गुप्त - रजत - सिक्कों की तौल 33 ग्रेन होनी चाहिए, क्योंकि सामान्यतः यह स्वीकार किया गया है कि गुप्त रजत- सिक्के भार - मान में क्षत्रप रजत - सिक्कों पर आधारित हैं, परन्तु गुप्त - रजत - सिक्कों की तौल 27-34 सम्भवतः यह अन्तर टकसाल के अधिकारियों की लापरवाही के के घिस जाने से या दोनों कारणों से हो सकता है ।

ताम- सिक्के

ग्रेन तक घटती-बढ़ती रही । कारण हो सकता है या सिक्कों गुप्त - युग में नियमित ताँबे के सिक्कों का प्रचलन चन्द्रगुप्त द्वितीय के शासन- काल में हुआ । ताँबे के सिक्कों के विषय में अल्तेकर महोदय का विचार है कि ये सिक्के 8 . 98 ग्रेन से 87 ग्रेन तक भार में बदलते रहे, अतः इनमें किसी विशेष तौल का अनुसरण नहीं किया गया है । चन्द्रगुप्त द्वितीय ने विभिन्न भार-मान के ताँबे के सिक्के जारी किये, यथा- अर्द्ध चित्र प्रकार के छोटे आकार के सिक्के 27 ग्रेन, 28 ग्रेन, 44 ग्रेन, 40.05 ग्रेन के सिक्कों का न्यूनतम भार 8.4 ग्रेन मिला है । अर्द्ध चित्र प्रकार हैं, जबकि चक्र- प्रकार के के बड़े आकार वाले सिक्के के हैं । छत्रधारी प्रकार के सिक्के 53.7 ग्रेन, 87 ग्रेन भार के हैं । धनुर्धारी प्रकार के सिक्के 84.3 ग्रेन 57.5 ग्रेन तथा 64.4 ग्रेन के हैं । चन्द्रगुप्त द्वितीय के कलश प्रकार के ताँबे के सिक्के 2. ग्रेन के मिले हैं । अल्तेकर का विचार है कि कभी-कभी इनकी तौल 0 ग्रेन से नीचे होती है । एक तो 3.3 ग्रेन में प्राप्त हुआ है । रामगुप्त ने चन्द्रगुप्त द्वितीय के ताँबे के सिक्कों के भार के सदृश्य 3 ग्रेन । तथा उसके आस-पास भारतीय भार के सिक्कों को अपनाया । कुमारगुप्त प्रथम के ताँबे के सिक्के संख्या में बहुत कम हैं । उसने छत्र - प्रकार, धनुर्धारी प्रकार, वेदी प्रकार आदि ताँबे के सिक्के जारी किये, जिनमें छत्र प्रकार और धनुर्धारी प्रकार के सिक्के क्रमशः 84 ग्रेन तथा ग्रेन भार के हैं, परन्तु वेदी प्रकार तथा राजा की खड़ी आकृति वाले सिक्कों का भार अज्ञात है । अन्य गुप्त शासकों के ताँबे के सिक्के अभी तक ज्ञात नहीं हैं । अतः उपर्युक्त भार-मानों को देखते हुए कहा जा सकता है कि तौल के हिसाब से गुप्त - ताम- सिक्कों को पण, अर्द्ध पण, पाद पण, काकिणी में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है । अतः ताम सिक्कों के बदलते हुए भार - मान के कि गुप्तों के ताँबे के सिक्कों के सम्बन्ध में कोई तौल जा सकता है ।

निष्कर्ष

सिक्के प्राचीन-भारत के आर्थिक इतिहास के अनेक पहलुओं पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं । यह सुविदित है कि प्राचीन-भारत में सिक्कों के निर्माण में सुवर्ण, रजत, ताम्र, कांसे, सीसा, पोटीन

आदि धातुओं का प्रयोग किया गया । इससे यह निर्धारित होता है कि विभिन्न क्षेत्रों में सिक्कों के निर्माण में विशेष धातुओं का उनकी प्राप्ति के अनुसार प्रयोग में लाया गया था । लगभग सभी देशों में धातुओं के चुनाव की सीमा थी, क्योंकि उनके असमान तथा भौगोलिक वितरण एवं इसकी सीमा अन्तर्राज्यीय वाणिज्य एवं व्यापार के विकास तक जारी रही । गुप्त- नरेशों ने सोने, चाँदी तथा ताँबे धातु का चुनाव कर सिक्के जारी किये कुषाण युग में सर्वप्रथम भारत में सोने के सिक्कों का प्रचलन प्रारम्भ हुआ । गुप्त- नरेशों ने सोने के धातु का सिक्कों में प्रयोग जारी रखा । सामान्यतः यह विश्वास किया जाता है कि भारत में रजत की बहुलता में आपूर्ति कभी नहीं हो पायी, इसलिए इस धातु की भारतीय आपूर्ति को विदेशी आयात से पूरा किया गया ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि

- [1] आर्यों द्वारा अश्व सेना के विस्तृत अध्ययन के लिए देखिए, एस. डी. सिंह, एन्शिएन्ट इण्डियन वार फेयर विद स्पेशल रिफरेन्स टू द वैदिक पीरियड, पृ0 53-64.
- [2] महा. बी. ओ. आर. इन्स्टीच्यूट, क्रिटिकल एडीशन), 1.124, 24, आदिपर्व के जतुर्हदाह पर्व में धनुषधारी अश्वारोही के सन्दर्भ में धनुर्विद्या में निपुणता को प्रदर्शित करने का उल्लेख है, एस. सी. मुखोपाध्याय महा., कलकत्ता 1899, पृ0 278-79) ने इस श्लोक का अनुवाद किया है । जिसके अनुसार अश्वों पर आरूढ़ राजकुमार विभिन्न बाणों को शीघ्रता से चलाते हुए लक्ष्य को भेदने लगे । इन बाणों पर बड़े सुन्दर रीति से उनके नाम उत्कीर्ण थे ।
- [3] जे. टी. व्हीलर ने अपने ग्रन्थ हिस्ट्री आफ इण्डिया, लन्दन 1880, पृ0 87 में महा. में उल्लिखित अश्वसेना की धनुर्विद्या का उल्लेख किया है,
- [4] द्रोण तथा उसके पुत्र अश्वत्थामा ने श्वेत वस्त्रों में उस क्षेत्र में प्रवेश किया, इन्द्र एवं देवों की प्रशंसा का गुणगान किया । राजकुमारों ने अपने हाथों में धारण किये शस्त्रों के साथ अनुसरण किया और अपने गुरु के चरण को चूमा । उन्होंने लक्ष्य पर बाणों से प्रहार किया, प्रथम पैरों पर और उसके पश्चात् अश्वों, गजों तथा रथों पर सवार होकर ऐसा किया ।
- [5] महा., भीष्मपर्व, 105.8 46.20-21. गोडे, वही, पृ0 43; हॉपकिन्स का भी विचार है महाकाव्य काल में

वर्णित अश्वारोही सेना संगठित एवं स्वतन्त्र टुकड़ी नहीं थी, जे. ए. ओ. एस., जिल्द 13, पृ0 262- 63.

- [6] एस. डी. सिंह, वही. मौर्य काल में अश्व-सेना की तकनीक आदिम अवस्था में प्रतीत होती है क्योंकि न तो रकाब और न ही जीन का ज्ञान था, परन्तु इसके बाद इसमें शीघ्रता से सुधार हुआ। रकाब और जीन के अंकन साँची शिल्प में अंकित हैं, देखिए, परेति, हिस्ट्री आफ मैन काइंड कल्चरल साइन्टिफिक डेवलपमेन्ट, जिल्द 2, पृ0 446;
- [7] भारतीय कला में रकाब के अंकन के लिए देखिए मार्शल, गाइड टू साँची, पृ० 138, संख्या 3; बलोफर, अर्ली इण्डियन स्कल्पचर, जिल्द 2 72; एस. डी. सिंह के अनुसार, 9वीं शताब्दी 9वीं शताब्दी ई. पू. एस. डी. सिंह, वही, कुमारस्वामी, जे. ए. ओ. एस., जिल्द शायद यह रकाब एक रस्सी का ढीला छल्ला था भारत में वास्तविक धातु की रकाब विकसित नहीं हुई थी, पृ0 63,
- [8] प्लिनी का अनुमान है कि उसकी सेना में 30,000 घुड़सवार थे, नेचुरल हिस्ट्री, 5. 22; तुलना कीजिए, चन्द्रगुप्त मौर्य और उसका काल, पृ० 220
- [9] चीनी ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि 90 ई. में यू-ची के राजा ने पानचाओ पर आक्रमण करने के लिए 70,000 अश्वारोही सैनिकों को एकत्रित कर उसे पराजित किया था, आई. ए., 1903, पृ0 421-22; तुलना कीजिए चट्टोपाध्याय, कुषाण स्टेट एण्ड इण्डियन सोसाइटी, पृ0 109;
- [10] हाथी गुम्फा अभिलेख के अनुसार खारवेल ने अपने शासन-काल के द्वितीय वर्ष में शातकर्णिक के विरुद्ध विशाल सेना भेजी थी, जिसमें अश्वसेना की संख्या अधिक थी, सरकार, एस.आई., जिल्द, पृ0 208. .
- [11] विस्तृत विवेचना के लिए देखिए, ओ. पी. सिंह, ए कल्चरल स्टडी इन द अर्ली, क्वायन्स आफ इण्डिया, अप्रकाशित पी एच. डी. थिसिस, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया, 1975 पृ० 174 175;
- [12] आयुधयुक्त हिन्दू-ग्रीक शक- नरेश अश्व सैनिक के रूप में सिक्कों पर अंकित मिलते हैं, देखिए, जे. एन. एस. आई. भाग 1, पृ0 59;
- [13] लहरी, सी. आई.जी. सी., पृ0 140, 21.9;

Corresponding Author

Anita Kumari*

Research Scholar, Magadh University, Bodhgaya